ये कविता सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के संग्रह 'खूंटियों पर टंगे लोग' से ली गई है। यह कविता शिक्षा की जरूरत और व्यवहारिक जिन्दगी की अपनी जद्दोजहद के बीच झूलते एक आम आदमी का बयान है। प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम की प्रासंगिकता और इसके पीछे सरकारी अमले की मंशा भी कविता में व्यक्त है।

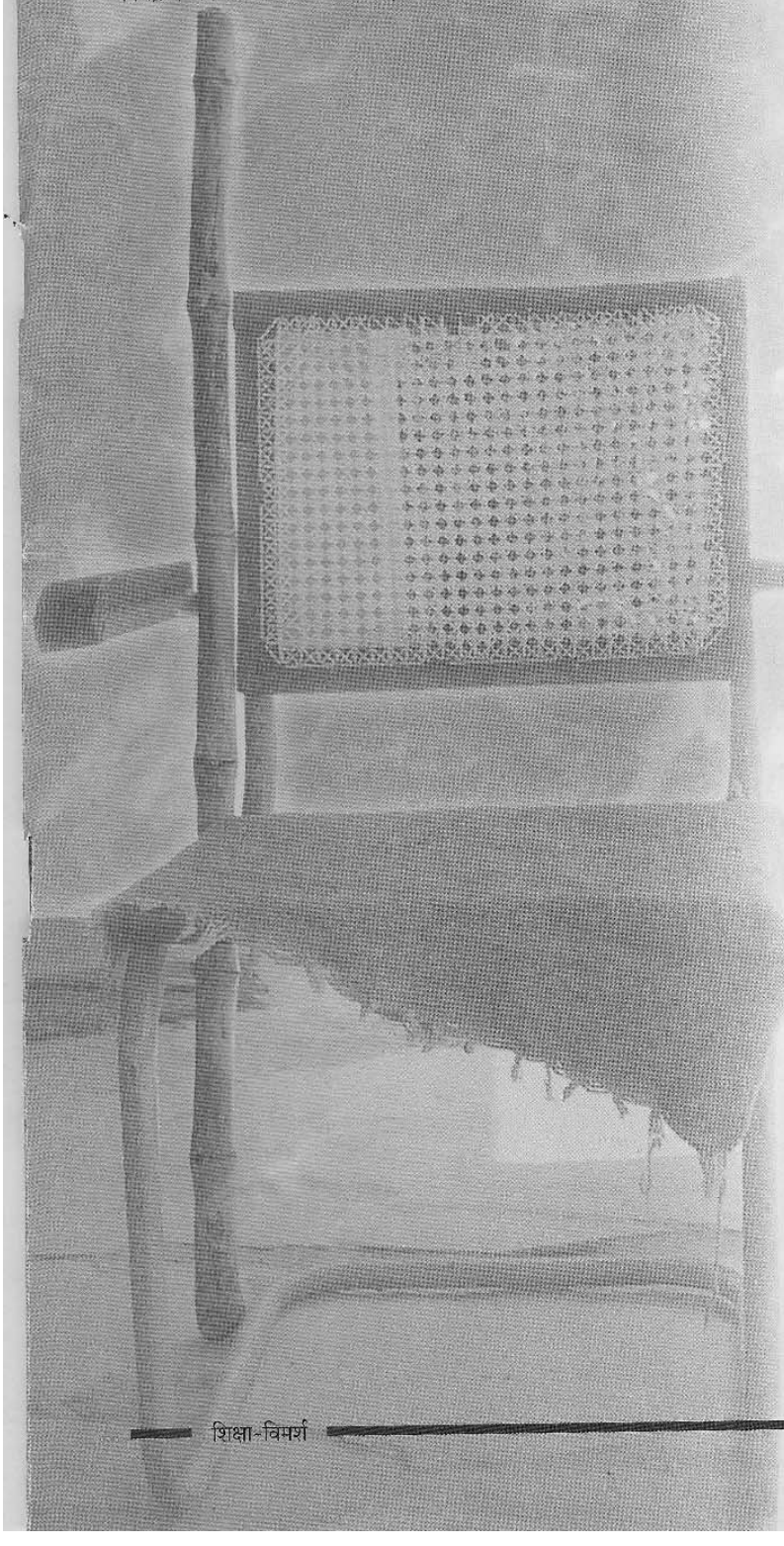

प्रौढ़ शिक्षा

❑ सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

क्या कुछ नहीं जला है।
कोयला ही कोयला
चारों तरफ फैला है।
खड़िया, ब्लैकबोर्ड,
कलम-दवात
तख्ती, स्लेट, पेंसिल, कापी, किताब-
जब आये तब आये,
अभी तो इसी कोयले से लिखो
हथेली पर एक-दो-तीन
फिर खपटे से जमीन पर-
सुक्खूराम वल्द मातादीन
गांव पिकौरा डाकखाना चौरी चौरा..
लिखते जाओ और लिखाते जाओ
थका-मांदा लौटा है किसान
संकल्प लो सिखाते जाओ !
माना न रोशनी है, न कमरा, न ओसारा है
टीचर, स्कूल, सब झूठे रजिस्टरों का मारा है।
सहारा लो अभी झुटपुटे का, उजाले का,
क्या करोगे ऐसे लाले का, पाठशाले का।
माना अकेले ही तुम, पर दस को पढ़ाओ
फिर दस गुना, दस गुना दस.. बढ़ाते जाओ।
इसी तरह एक दिन पोथी बांचना सिखा दो
भाड़ में जाये सरकार, 'सांच को आंच ना' सिखा दो।
बता दो उसे क्या स्वाधीनता है क्या प्रण है,
सिखा दो उसे क्या छलावा क्या शोषण है।
कोयला ही कोयला अभी चारों तरफ फैला है
देश का नहीं, देश के कर्णधारों का मन मैला है। ◆